ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol-2* Issue-11* December- 2017
Innovation The Research Concept

कबीर के काव्य में भक्ति दर्शन

नवीन कुमार तेकाम
सहायक प्राध्यापक,
हिन्दी विभाग,
रानी दुर्गावती शास.
स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
मण्डला ,म.प्र.

सारांश

भारतीय साहित्य के इतिहास में कबीरदास का महान विचारकों एवं प्रतिभाशाली कवियों में अग्रिम स्थान है ।कबीरदास ने रूढ़ियों एवं प्राचीन मान्यताओं के विरुद्ध भारतीय जनता का पथ आलोकित किया है । वे सही अर्थ में जन–जीवन के नायक रहे हैं ।कबीरदास ने निर्गुण भक्ति पर जोर दिया है। लेकिन परम ब्रम्हा के साकार सगुण रूप की भक्ति करते हैं। कबीरदास की भक्ति भावना सूफी प्रभाव के कारण माधुर्य से परिपूर्ण है। कबीरदास के काव्य में रूढ़ियों एवं सदियों से चली आ रही परम्पराओं पर प्रहार किया गया है। कबीर ने अपने काव्य में हिन्दू–मुसलमानों को फटकार, हृदय की शुद्धि, प्रेमसाधना की कठिनता आदि पर जोर दिया है।

मुख्य शब्द : मुख्य शब्द लिखें

प्रस्तावना

कबीरदास भक्तिकाल की निर्गुण धारा की ज्ञानमार्गी शाखा के कवि माने जाते हैं। उनकी भक्ति भावना की व्यंजना निराकार ब्रह्म को सगुण या साकार रूप में निरूपित करने की है। कबीरदास मानते हैं कि मायामोह से ग्रस्त मानव का उद्धार सिर्फ भगवान की भक्ति से ही संभव हो सकता है। भक्ति के बिना इस संसार में शांति की स्थापना होना असंभव है। मानव की मुक्ति का मार्ग भक्ति से ही संभव है। कबीर की भक्ति ने भारतीय जन–मानस को उस समय अवलम्बन प्रदान किया था जब वह सिद्धों और योगियों की साधना से ऊब रही थी। इस महान सन्त ने अपनी भक्ति का ऐसा सबल और दृढ़ अवलम्बन धर्म–प्राण जनता को प्रदान किया कि वह भक्ति भाव में डूब गई।

कबीर की भक्ति भावना के तीन रूप उनकी कविताओं द्वारा उद्घाटित होते हैं–

1. माधुर्य भाव अथवा प्रेम रूपी भक्ति।
2. सखा भाव भक्ति।
3. विनय अथवा दास्य भाव भक्ति।

माधुर्य भाव भक्ति

इस भक्ति में माधुर्य आप्लावित रहता है और भगवान और भक्त की सीमा रेखा समाप्त हो जाती है। इस प्रकार परस्पर दाम्पत्य रूप की अनुभूति होती है। प्रेम की बहुत परिभाषाएँ हैं किन्तु मुख्य रूप से मन,वचन और कर्म सब ईश्वर के चरणों में अर्पित हो जाते हैं तो एक क्षण को भी ब्रह्म का वियोग पीड़ादायक होता है। प्रभु या ब्रह्म रोम प्रतिरोम और सृष्टि के कण–कण मे विद्यमान है–

''कागद लिखै सो कागदी, कि व्यवहारी जीव।
आतम दृष्टि कहा लिखै, जित देखै तित पीव।।''

कबीरदास ने प्रेमाभक्ति के संयोग व वियोग दोनों ही रूपों का चित्रांकन किया है–

दुलहिन गावहु मंगलाचार,
मोरे घर आये हो राजाराम भरतार।
तन रति करि मैं मन रति करि हौं,
पाँचों तत्त बराती।
रामदेव मोहि ब्याहन आये,
मैं जोवन मदमाती।

कबीरदास ने आत्मारूपी दुलहिन की उस आत्मानुभूति का वर्णन किया है जब राजा राम (ईश्वर) उससे मिलने अर्थात् आत्मा, परमात्मा में विलीन होती है। आत्मारूपी दुलहिन यौवन में मदमस्त है। वह अपने प्रियतम राम से शारीरिक प्रेम ही नहीं, आत्मिक प्रेम भी करती है।

विरह भी कबीर की भक्ति पद्धति का प्रमुख अंग है प्रियतम के विषय में वे कहते हैं–

''मन परतीति न प्रेम रस, ना इस तन में ढंग।
क्या जागौं उस पीव सूं, कैसी रहसी रंग।।''

अपने प्रियतम को जन आत्मा नहीं पाती तो उसके वियोग में खूब तड़पन से कम नहीं है। कबीर की भक्तात्मा ने विरह का जो वर्णन किया है, वह इतना स्वाभाविक और मार्मिक है कि लगता है कबीर का कबीरत्व, पौरूषत्व यहाँ समाप्त हो गया है और उनकी आत्मा ने स्त्री रूप में प्रियतम के लिए ये शब्द कहे हैं। प्रिय से संदेश पाने के लिए आत्मा इस भाँति छटपटाती है मानो यदि उसे अभीष्ट की प्राप्ति नहीं हुई तो न जाने क्या होगा–

''बिरहनि ऊभी पंथ सिरि, पंथी बूझै धाइ।
एक सबद कहि पीव का कबर मिलैंगे आइ।।''
''आँखड़ियाँ झाई पड़ी पंथ निहारि निहारि।
जीभड़ियाँ छाला पड्या राम पुकारि पुकारि।

दास्य भाव की भक्ति

कबीरदास का काव्य दास्य भावना से परिपूर्ण है। वे मानते हैं कि भवसागर से तरने का एकमात्र रास्ता दास्य भाव भक्ति है। ईश्वर भक्ति के लिए उन्होंने आंशिक रूप में दास्य भाव को स्वीकार किया है। उनका विश्वास है कि ईश्वर में अटूट भक्ति ही मुक्ति का साधन है। ज्ञान तो संसार की गुत्थी में उलझा देता है। भक्त के लिए इतना ही ज्ञान पर्याप्त है । कि वह विषय–वासनाओं से मुक्त होकर ईश्वर का गुणगान करें–

जो सुख प्रभु गोविन्द की सेव।
सो सुख राज न लहियो।।
पोथी पढ़–पढ़ जग मुआ, पंडित भया न कोय।
एकै आखर प्रेम का, पढ़ै सो पंड़ित होय।।

सखा भाव की भक्ति

कबीरदास अपने उपास्य को सखाभाव से स्मरण करते हैं। इस प्रकार ईश्वरीय भक्ति में वह प्रेम, माधुर्य, दास्यभाव और सखाभाव को चित्रित कर भक्ति के विभिन्न भावों की सशक्त अभिव्यक्ति करते हैं–

कुछ करनी कुछ करम गति,
कुछ पुरबला लेख।
देखौ भाग कबीर का,
दोसत किया अलेख।
देखौ कर्म कबीर का, पूख जनम का लेख।
जाका महल न मुनि लहै, सो दोसत किया अलेख।।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य कबीरदास के काव्य में भक्ति दर्षन पर प्रकाश डालना है। चाहे वह प्रेम रूपी भक्ति या सखा भाव की भक्ति या दास्य भाव की भक्ति हो, कबीरदास भक्ति भावना व्यक्त करने में सर्वश्रेष्ठ रहे हैं। कबीरदास की भक्ति निष्काम की भक्ति है।

निष्कर्ष

कबीरदास निर्गुण ब्रह्म के उपासक थे लेकिन निराकार निर्गुण को न तो प्रेम किया जा सकता है और न ही देखा जा सकता है। यह केवल ध्यान, चिन्तन और मन्थन की विषयवस्तु है। इसी कारण निर्गुण ब्रह्म के अनुयायी होते हुए भी कबीर में सगुणोपासक की छवि परिलक्षित होती है। कबीरदास की भक्ति सर्वथा निष्काम भक्ति है। वह भक्ति को मात्र अपनी इच्छा या आकांक्षा पूर्ति का साधन नहीं मानते। उनकी भक्ति का अभीष्ट केवल भक्ति है। आत्मा का परमात्मा में मिलन ही भक्ति है। फल की इच्छा से की गई भक्ति व्यर्थ है। उन्होंने निर्गुण ब्रह्म की सकारात्मक भाव से अर्चना की है। इस प्रकार उनके काव्य में सगुणोपासक भक्तों के हृदय का स्पंदन है। आत्मनिवेदन है, आत्मसमर्पण है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *डॉ. नगेन्द्र,हिन्दी साहित्य का इतिहास, 1997, मयूर पेपर बैक्स पृष्ठ क्र. 127*
2. *डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत,कबीर ग्रंथावली, 2009, अषोक प्रकाशन,नई सड़क दिल्ली पृष्ठ क्र. 28*
3. *आचार्य रामचन्द्र शुक्ल,,हिन्दी साहित्य का इतिहास, 2002, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद पृष्ठ क्र. 49*
4. *डॉ महाराज सिंह परिहार,प्राचीन एवं मध्यकालीन काव्य, अभय प्रकाश मंदिर आगरा, पृष्ठ क्र. 30*